उच्च शिक्षा संस्थानों में स्वायत्तता का सवाल

भारत के उच्च शिक्षा संस्थान एक बार फिर विश्व सूची में पिछड़ गए हैं। विश्व के 250 शीर्ष संस्थानों में एक भी भारतीय संस्थान अपना स्थान नहीं बना पाया है। इसका एक बहुत बड़ा कारण इन संस्थानों को न मिलने वाली स्वायत्तता है। पूरे विश्व में ऐसे संस्थान ही ऊपर उठ पाते हैं, जो शिक्षा के साथ-साथ अनुसंधान के क्षेत्र में आगे हो। ऐसे सभी संस्थान स्वायत्त हैं।

किसी संस्थान की स्वायत्तता को चार स्तरों पर जाँचा जा सकता है - अकादमिक, संगठनात्मक, वित्तीय एवं स्टाफ। यहाँ हम संगठनात्मक एवं वित्तीय स्वायत्तता की ही बात कर रहे हैं।

- संठनात्मक स्वायत्तता में सबसे पहला प्रश्न यह आता है कि हमारे संस्थान अपने निदेशक या उप कुलपति का चुनाव कैसे कर रहे हैं। इसी से किसी संस्था के बाकी के कार्य निर्धारित होते हैं। भारत में इस प्रकार का चुनाव सरकार या मंत्रालय करते हैं। हांलाकि इसके लिए एक चुनाव समिति होती है, जो नामों की सिफारिश करती है। परन्तु अक्सर यह सरकार पर छोड़ दिया जाता है। राज्यों और केन्द्रों के सभी उच्च शिक्षण संस्थानों के लिए इसी प्रकार से प्रमुख का चुनाव किया जाता है।

इस प्रक्रिया में यह मानकर चला जाता है कि उम्मीदवार को नियोक्ता की 'गुड बुक्स' में होना चाहिए। इसलिए बहुत से मेधावी उम्मीदवार चयन प्रक्रिया में भाग ही नहीं लेते। इसका सीधा सा अर्थ यह है कि इस पद पर नियुक्ति में प्रतिभा के अलावा भी कई बातें जुड़ी रहती हैं। विदेशों में सामान्यतः इन पदों का चुनाव विश्वविद्यालय के ही बोर्ड, सीनेट आदि के द्वारा किया जाता है। इसमें किसी एक प्राधिकारी की भूमिका नहीं होती।हमारे संस्थानों में भी ऐसी प्रथा लागू करके

स्वायत्तता को बहुत हद तक बढ़ाया जा सकता है। ऐसा सुनने में आ रहा है कि आई.आई.एम. बिल में इस प्रकार की स्वायत्तता दी जाने वाली है।

- दूसरा मुख्य मुद्दा आर्थिक स्वायत्तता का है। जब तक उच्च शिक्षा संस्थानों को धन के लिए सरकार पर निर्भर रहना पड़ेगा, तब तक उनकी स्वायत्तता बंधक बनी रहेगी। सार्वजनिक शिक्षण संस्थान तो सरकारी सहयोग से ही चलते हैं। वित्तीय सहायता के लिए कुछ मानक तय करके इस समस्या का समाधान किया जा सकता है। विदेशों में ऐसा ही किया जा रहा है।

किसी संस्थान में कुल विद्यार्थियों की संख्या, संकाय, शोध एवं अनुसंधान योजना और परामर्श कार्य आदि को ध्यान में रखते हुए सहायता दी जाए। सभी संस्थानों के लिए एक ही सूत्र काम नहीं कर सकता। जैसे व्यावसायिक शिक्षण संस्थान को बहुत कम या नहीं के बराबर, इंजीनियरिंग संस्थानों को थोड़ी बहुत एवं मानविकी संस्थानों को पर्याप्त सहायता दी जाए। इस प्रकार के सूत्र आधारित वित्तीय सहायता दिए जाने से संस्थान सरकार के अंतर्गत रहते हुए भी स्वतंत्र रह सकते हैं। इस फार्मूले से वित्तीय सहायता का पूर्वानुमान किया जा सकता है। उस पर भरोसा रखकर जब संस्थान अपना ध्यान शिक्षण के स्तर को ऊँचा उठाने में लगाएंगे, तभी उन्हें विद्यार्थी अधिक मिलेंगे और प्रति विद्यार्थी वित्तीय सहायता में भी तभी इजाफा होगा।

इसके साथ ही किसी स्वायत्त संस्थान की देश एवं समाज के प्रति जवाबदेही को निश्चित करना अत्यंत आवश्यक होता है। इसका सबसे अच्छा तरीका शोध योजनाओं एवं उनके लिए दी जाने वाली निधि को इस प्रकार दिशा देना है कि वे अपने आप देश हित में काम करें। भारत एवं अन्य देशों में ऐसा किया भी जा रहा है।

स्वायत्तता को प्रभावित करने वाले और भी कारक हैं। लेकिन इन दो स्तरों पर भी काम करके सरकार हमारे संस्थानों की ऊर्जा को मुक्त प्रवाह प्रदान कर सकती है।

'द टाइम्स ऑफ इंडिया' में प्रकाशित पंकज जलोटे के लेख पर आधारित।